भारतीय चिन्तन परम्परा में जल एवं पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा

गणेश कुमार पाठक

अमर नाथ मिश्र पी.जी. कालेज दूबेछपरा, बलिया (उ.प्र.)
Email: drgkpathakgeo@gmail.com

सारांश

प्राचीन काल में मानव जब प्रकृति के संरक्षण में रहता था और प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाकर रहता था, पर्यावरण प्रदूषण एवं पारिस्थितिकी असंतुलन संबंधी कोई भी समस्या नहीं थी। किन्तु जैसे–जैसे मानव विकास की दौड़ में आगे बढ़ता गया, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन एवं शोषण तीव्र गति से बढ़ता गया, जिससे एक तरफ जहाँ पारिस्थितिकी असंतुलन में वृद्धि हुई, वहीं दूसरी तरफ मानव की भोगवादी प्रवृत्ति एवं विलासितापूर्ण जीवन में पर्यावरण के प्रत्येक पक्ष को प्रदूषित करने में अहम् भूमिका निभाई, जिससे अब मानव का अस्तित्व ही संकट में पड़ता नजर आ रहा है, क्योंकि प्रकृति ने मानव के कुकृत्यों का बदला लेना प्रारम्भ कर दिया है और "हम ही शिकारी, हम ही शिकार" वाली कहावत चरितार्थ हो रही है।

किन्तु प्रश्न यह उठता है कि इस बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण एवं पारिस्थितिकी असंतुलन को कैसे दूर किया जाय एवं किस तरह से पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी की सुरक्षा की जाय। वैसे तो हमारे भारतीय चिन्तन परम्परा में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा अनादि काल से चली आ रही है और सम्भवतः यही कारण है कि अपने देश में पर्यावरण प्रदूषण एवं पारिस्थितिकी असंतुलन की समस्या अन्य देशों से कम है। हमारी भारतीय संस्कृति प्राकृतिक अनुराग एवं प्रकृति संरक्षण की चिन्तन धारा है। हमारे भारतीय चिन्तन परम्परा में प्रकृति प्रेम इस तरह समाया एवं रचा–बसा हुआ है कि प्रकृति से जुदा अस्तित्व की बात सोच भी नहीं सकते हैं। हमारे भारतीय ऋषि–मुनि इतने उच्च कोटि के वैज्ञानिक थे कि उन्होंने जड़–चेतन सभी तत्वों की सुरक्षा एवं संरक्षण के लिए विधान बनाये हैं। यही कारण है कि पर्यावरण संरक्षण एवं पारिस्थितिकी संतुलन की बात हमारे प्राचीन भारतीय साहित्य में कूट–कूट कर भरी पड़ी है। चूँकि अपने देश की जनता धार्मिक एवं आध्यात्मिक प्रकृति की रही है। इसीलिए प्रकृति के सभी अंगों (तत्वों) में किसी न किसी देवी–देवता का अंश मानकर उनकी सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु पूजा का विधान बना दिया गया। हमारे भारतीय मनीषियों से सम्पूर्ण प्राकृतिक शक्तियों को आराध्य माना है और उनके संरक्षण की अवधारणा को प्रस्तुत किया है।

Abstract

When, in ancient India human lived in a co-relationship and conservation of nature, there was no any problems of environmental conservation and ecological inbalances. But when human plays a fast developmental role, the factors of environment and ecology are decrease very rapidely and thats reason environmental polution and ecological embalances are increases fastly. In other way the trend of human epicurean and luxarious life give a most importante role to polute every aspects of environment and ecology. In this respect nature also revenge from human beings and the substance of human life is also calamity.

The main objective of this study to find out the concepts of environmental and ecological conservation in Indian perspectives for the knowledge of man and society. In this study the analytical and descriptive methodology have been used for the identity of concepts of water and environmental conservation in Indian perspectives.

In above respect questions does arise that what we do from the reduction, protection and conservation of environmental pollution and ecological imbalances. In this respect in this study I find out that the concepts of environmental and ecological conservation in India run out along very-very ago that's call Vedic period or Ancient Indian period. Due to these concepts in India environmental pollution and ecological imbalances are very low in comparison to other countries. The main thought and reflection of our Indian culture is natural affection and nature conservation.

In Indian thought nature affection is goes in the root of every man and society. Our Rishies and Munies are relevent scientist in that period, who creat the path and laws to protect and conservate the every aspect of biotic and abiotic component. Environmental and ecological conservation concepts are alo found in our ancient Indian literature, just like Vedas, Puranas, Smrities, Ramayan, Mahabharat and ancient Sanskrit books and other books.

It is most important factor that Indian are Prays of Nature as a God thates call "Bhagwan". Every aspect and components of nature such as water, wind atmosphere, fire, land (Dharati), trees, animals, birds (Elora and funa) are prays by Indian 'Devies' and 'Dewatas'. It is shows that our Indian Rishies munies and maharisies are recognise the 'Whol Natural Power" as a GOD (BHAGWAN= Bha=Bhumi, G=Gagan, W=ind, A=Agni, N=Neer). It means these factors of Bhagwan's are the basic elements of nature and we protect and conservate to nature from spretual processes and this is the Indian concepts of conservation to protect and save the environment and ecology.

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य भारतीय चिन्तन परम्परा में निहित पर्यावरण संरक्षण की अवधारणाओं को प्रकाश में लाना है, ताकि आम जनता उससे अवगत होकर प्रर्यावरण संरक्षण में अपनी अहम भूमिका निभा सके।

अध्ययन की विधितंत्र

प्रस्तुत अध्ययन में विश्लेषणात्मक एवं विवेचनात्मक विधितंत्रों का प्रयोग करते हुए भारतीय वांगमय में प्रस्तुत पर्यावरण संरक्षण की अवधारणाओं की पहचान कर उनका विश्लेषण एवं विवेचना किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या

भारतीय चिन्तन परम्परा में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा कूट–कूट कर भरी पड़ी है। हमारे ऋषि–मुनि चूँकि प्रकृति के सम्पर्क में एवं संरक्षण में रहते थे, इसलिए प्रकृति के संरक्षण हेतु सभी विधानों का प्राविधान किया गया है।

भारतीय चिन्तन परम्परा में जल को भी देवता मानते हुए नदियों को जीवनदायिनी कहकर सम्बोधित किया गया है। यही नहीं, नदियों, तालाबों एवं पोखरों में मल–मूत्र विसर्जन पर भी रोक लगायी गयी है। जैसा कि मनुस्मृति में भी कहा गया है कि–

'नात्सु मूत्रं पुरीषं वाष्टोवनं समुरसृजेत।
अमेध्यलिप्तभव्यद्वा लोहिवं वा विषाणि वा।।'

अर्थात् जल में मूल–मूल, थूक अथवा अन्य दूषित पदार्थ, रक्त या विष का विसर्जन न करें।

यही नहीं वैदिक ऋषियों द्वारा जल की प्राप्ति के लिए भी कामना की गयी है, जैसा कि अथर्ववेद के भूमि सूक्त (12/1/30) में उल्लेख आया है कि–

'शुद्धा व आपस्तन्वे क्षरन्तु.....।'

अर्थात् हमारे शरीर में शुद्ध जल प्रवाहित होता रहे। हमारी नदियों के बारे में कहा गया है कि गंगा के दर्शन मात्र से ही मुक्ति मिल जाती है। यथा–

'गंगे, तव दर्शनात मुक्तिः।'

एक अन्य स्थान पर कहा गया है कि–

'गंगे व यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।
नर्मदे सिन्धु कावेरी जलस्मिन सन्निधि कुरू।।

भारतीय चिन्तन परम्परा में जल को इतनी महत्ता प्रदान की गयी है कि जल स्रोतों में प्रातः काल स्नान करने से पहले कंकड़ी मारकर सो रही गंगा को जगाया जाता है, तब उसमें स्नान किया जाता है और स्नान करने से पूर्व उनका चरण स्पर्श किया जाता है। इस तरह प्रत्येक जल स्रोत में गंगा का स्वरूप देखा जाता है। यही नहीं, सभी प्रकार के जल स्रोतों को देवता मानकर पूजा करने का विधान हमारे भारतीय संस्कृति में निहित है, ताकि इन जल स्रोतों का संरक्षण किया जा सके।

हमारे जितने पर्व, त्यौहार, रीति–रिवाज एवं परम्परायें हैं, उन सभी में जल संरक्षण की अवधारणा छिपी हुई है। इनसे सम्बन्धित जो भी लोकोक्तियाँ, कहावतें, मुहावरे एवं लोकगीत परम्परागत रूप से हमारे समाज में प्रचलित हैं एवं गाये जाते हैं, उन सभी में जल संरक्षण की अवधारणा परिलक्षित होती है।

हमारे भारतीय मनीषियों (ऋषि–मुनियों) द्वारा प्रकृति का भरपूर गुणगान किया गया है। उन्होंने वनों एवं वन्य जीवों का गुणगान किया है एवं उनकी महिमा का वर्णन किया है। कारण कि वे प्रकृति के बीच रहते थे, सोचते, विचारते एवं प्रकृति में ही अपनी इहलीला समाप्त कर विलीन हो जाते। यही कारण है कि वे प्रकृति को जीवनदायिनी, सुषमा एवं सम्पदा का स्रोत समझते थे। यही कारण है कि हमारी भारतीय संस्कृत अरण्य संस्कृति रही है।

भारतीय मनीषियों ने सम्पूर्ण प्राकृतिक शक्तियों को ही देवता स्वरूप माना है। ऊर्जा के अजस्र स्रोत सूर्य को देवता मानते हुए ''सूर्य देवो भव'' कहा गया है। हम जानते हैं कि सूर्य के बिना इस पृथ्वी पर प्राणी जगत का अस्तित्व सम्भव नहीं है। सम्भवतः इसी तथ्य को ध्यान में रखकर हमारे मनीषियों ने ऋग्वेद में कहा है कि सूर्य से हमारा कभी भी वियोग न हो–

'नः सूर्यस्य संदृशो मा युयोधाः' (ऋग्वेद, 2/33/1)

यही नहीं सूर्य को स्थावर–जंगम की आत्मा कहकर पुकारा गया है। यथा–

'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्रच' (ऋग्वेद, 1/115/1)

उपनिषदों में भी सूर्य को प्राण की संज्ञा दी गयी है। यथा–

'आदित्यो ह वै प्राणः (प्रश्नोपनिषद–1/5)

सूर्य प्रकाश हमें निरन्तर प्राप्त होता रहे एवं सूर्य रश्मियों से हमारा जीवन संचारित होता रहे, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए ही घर का द्वार पूरब की तरफ अथवा उत्तर की तरफ रखने का प्रावधान हमारे मनीषियों द्वारा किया गया है। कारण कि इन दिशाओं में सूर्य प्रकाश निरन्तर मिलता रहा है। यथा–

'प्राङ्गमुखमुदङ्ग मुखं वा विमुखतीर्थ कूटागारं कारयेत'

(चरक, शा.अ. 14/46)

भारतीय चिन्तन परम्परा में जल संरक्षण की अवधारणा कूट–कूट कर भरी पड़ी है। भारतीय चिन्तन परम्परा में वायु को देवता माना गया है। उपनिषदों में वायु की दैवीय शक्ति की संकल्पना का वर्णन किया गया है, जिसमे कहा गया है कि वायु ही प्राण बनकर शरीर में बास करता है। यथा–

'वायुवै वै प्राणो भूत्वा शरीरमाविशत्।'

वेदों में वायु को औषधीय गुणों से युक्त माना गया है और प्रार्थना किया गया है कि 'हे वायु, अपनी औषधि ले आओ एवं यहाँ से सभी दोषों को दूर करो, क्योंकि तुम ही सब औषधियों से युक्त हो।' यथा–

'आ वात वाहि भेषजं विवात वाहि पदुपः।
त्वंहि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयसे।। (ऋग्वेद–137/3)

भारतीय चिन्तन परम्परा में वैदिक मंत्रों के माध्यम से मानव को यह शिक्षा दी गयी है कि वह पशु–पक्षियों को अपने से हेय न समझें एवं नदियों, पर्वतों, वृक्षों तथा प्रकृति के अन्य अंगों में देवी शक्ति का दर्शन करें। इसी दृष्टि से मानव एवं पशु–पक्षी को आश्रय प्रदान करने वाली इस पृथ्वी को माता एवं अपने को उसका पुत्र माना गया है। यथा–

'माता भूमिः पुत्रों अहं पृथिव्याः।'

अर्थात् भूमि हमारी माता है एवं हम पृथ्वी के संतान हैं। यह पृथ्वी हमें अपना पुत्र मानकर उसी तरह निरन्तर अजस्र स्रोत के समान धन–धान्य प्रदानकरती रहती है, जैस कि गाय से दूध मिलता है। यथा–

'सहस्त्रं धारा द्रविणस्य मेदुहां,
ध्रवेत धेनुः अनवस्युरन्ती तथा
मणिं हिरण्यं पृथिवी ददातु में।

पृथ्वी के इस महत्व को समझ कर ही पृथ्वी को बार–बार प्रणाम किया गया है। यथा–

नमो मात्रे पृथिव्यैः, नमो मात्रे पृथिव्यैः।

भारतीय चिन्तन परम्परा में वृक्षों को भी देवता माना गया है। भारतीय आयुर्विज्ञान के अनुसार विश्व में कोई भी वनस्पति ऐसी नहीं है जो औषधि न हो। सम्भवतः इसीलिए 'श्वेताश्वरोपनिषद' में वृक्षों को साक्षात ब्रह्म के समान माना गया है। यथा–

वृक्ष इव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकः।

मत्स्यपुराण में भी कहा गया है–

दशकूप समावापी दशवापी समोह्रदः।
दशह्रदः समः पुत्रो, दश पुत्रो समोवृक्षः।

अर्थात् दस कुंओं के बराबर एक बावड़ी, दस बावड़ियों के बराबर एक तालाब है, दस तालाब के बराबर एक पुत्र है एवं दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष है।

वृक्षों के प्रति ऐसा प्रेम एवं अनुराग शायद ही किसी अन्य देश की संस्कृति एवं चिन्तन परम्परा में मिलता हो जहाँ वृक्ष को पुत्र से भी उच्च दर्जा दिया गया है एवं पूजा की जाती है, वहाँ वृक्षों को काटने की बात तो सोची भी नहीं जा सकती है। सम्भवतः इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर वृक्षों को पूजनीय एवं वंदनीय माना गया है एवं 'भामिनी विलास' में कहा गया है कि–

'धत्ते भरं कुसुमपत्रफला वली नां धर्मव्यथां।
वहाति शीत भवा रुजश्च।।
यो देहमर्ययति चान्यसुखस्य हेतोस्तस्मै।
वादाव्यगुरवे तस्ये नमोस्तु।।'

अर्थात् जो वृक्ष फूल, पत्ते एवं फलों के बोझ को उठाए हुए धूप की गर्मी एवं शीत की पीड़ा को बर्दाश्त करता है एवं दूसरों के सुख के लिए अपना शरीर अर्पित कर देता है, उस वन्दनीय श्रेष्ठ वृक्ष को नमस्कार है।

'नृसिंह पुराण' में भी वृक्ष को ब्रह्म स्वरूप मानकर उसे आदर प्रदान किया गया है। यथा–

एतद् ब्रह्म परं चैव ब्रह्म वृक्षस्य तस्य तव।

जातक कथाओं में तो वृक्षों को हमारी सभी आवश्यकताओं को पूरा करने वाले कल्पवृक्ष के रूप में कल्पना की गयी है।

सर्वकामदा वृक्षाः।

महाभारत एवं रामायण में कल्पवृक्षों का विवरण प्रस्तुत है। महाभारत के भीष्मपर्व में वृक्ष को सभी मनोरथों को पूरा करने वाला कहा गया है। यथा–

'सर्वकामः फलाः वृक्षा।'

महाभारत के आदि पर्व में किसी गाँव के अकेले फले–फूले वृक्ष को चैत्य के समान पूजनीय माना गया ह। यथा–

एको वृक्षा हियो ग्रामे भवेत पर्णकलान्वितः।
चैत्यो भवति निज्ञांतिर्चनीयः सपूजितः।।

'स्कन्दपुराण' में वृक्षा में विष्णु का वास माना गया है–

'एको हरिः सकल वृक्षगतो विभाति।'

'अथर्ववेद' में पीपल के वृक्ष को देवसदन माना गया है–

'अश्वत्थः देवसदन।'

'विष्णुधर्म सूत्र' में कहा गया है कि प्रत्येक जन्म में लगाये गये वृक्ष अगले जन्म में संतान के रूप में प्राप्त होते हैं–

वृक्षारोपयितु वृक्षाः परलोके पुत्राः भवन्ति।

'चाणक्य नीति' में कहा गया है कि एक वृक्ष से वन उसी प्रकार सुन्दर लगता है, जिस प्रकार अकेले पुत्र से कुल। यथा–

एकेनापि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगंधिना।
वासितं स्याद वन सर्व सुपुत्रेण कुलं यथा।

'वाराह पुराण' में उल्लेख आया है कि जो पीपल, नीम या बरगद का एक, अनार या नारंगी का दो आम के पांच एवं लताओं के दस वृक्ष लगाता है वह कभी नरक में नहीं जाता।

अश्वस्थमेकं पिचुमिन्दमेकं व्यग्रेषमेकं दसुपुष्पजातीं।
द्वे–द्वे दाडिम मातुलुंगे पंचाम्ररोपी, नरकं न याति।।

तुलसी के पौधे के बारे में कहा गया है जिस घर में तुलसी की नित्य पूजा होती है, उसमें यमदूत भी नहीं आते। यथा–

तुलसी यस्य भवने तत्यहं परिपूज्ये।
तद्गृहं नोवर्सन्ति कदाचित यमकिंकरा।।

विष्णुधर्म सूत्र, स्कंदपुराण एवं याज्ञवल्क्यस्मृति में वृक्ष को काटने को अपराध माना गया है और उसके लिए राजा द्वारा दण्ड का विधान बनाया गया है।

वृक्षों की तरह ही पशु–पक्षियों की सुरक्षा की भावना भी भारतीय चिन्तन परम्परा में युगों–युगों से निहित है। यही कारण है कि हिंसक एवं अहिंसक तथा विषधर जीव जन्तुओं को भी किसी न किसी देवता का वाहन बनाकर इनकी श्रेष्ठता प्रदान करते हुए इनकी सुरक्षा एवं संरक्षण का प्रावधान किया गया है। यही कारण है कि इन पशु–पक्षियों की भी पूजा का विधान बनाया गया है। गाय एवं बैल तो भारतीय संस्कृति की पहचान हैं। 'बाघ, शेर, चीता, हाथी, चूहा, गरुण, सर्प, कच्छप, हंस, उल्लू और आदि छोटे एवं बड़े हिंसक एवं अहिंसक सभी जीव–जन्तुओं का संबंध देवी देवताआं से उनके वाहन के रूप में जोड़कर उन्हें सुरक्षा एवं संरक्षण प्रदान करने की जो उदात्त भावना भारतीय चिन्तन परम्परा में है, वह अन्यत्र कहाँ।

जैन एवं बौद्ध साहित्य में वन यात्राओं एवं वृक्ष महोत्सवों का मनोहर विवरण प्रस्तुत है, जो वन वृक्षों एवं पशु–पक्षियों के संरक्षण की उदात्त भावना से ही प्रेरित है। गौतम बुद्ध को भी पीपल के वृक्ष के नीचे ही ज्ञान प्राप्त हुआ था, तभी से उसे 'बोधिवृक्ष कहा जाता है। सुंग कुषाणकला में बोधिवृक्ष की पूजा का सुन्दर चित्रण मिलता है।

भारत में वृक्ष पूजा की परम्परा की पुष्टि सिन्धु घाटी की सभ्यता में भी मिलती है। सिन्धु घाटी से शप्तमुद्राओं पर वृक्ष पूजा के दृश्य चित्रित हैं। मौर्यकाल के श्रीचक्रों पर भी सघन वृक्षों से घिरी श्रीलक्ष्मी को चित्रत्रित किया गया है। विदिशा से प्राप्त एक शिल्प पर कल्पवृक्ष का मनोहर दृश्य अंकित है, जो कोलकाता के इंडियन म्यूजियम में है। वेदिका से मंडित इस वृक्ष को 'श्रीवृक्ष' कहकर सम्बोधित किया गया है।

पर्यावरण संरक्षण में 'यज्ञ' भी अहम् भूमिका निभाता है और भारत में 'यज्ञ' करने की परम्परा प्रागैतिहासिक काल से ही रही है। हम जानते हैं कि 'यज्ञ' में जो हवन किया जाता है, उसमें औषधीय पदार्थों का ही प्रयोग किया जाता है, जिसका धुँआ वातावरण में व्याप्त होकर पर्यावरण को शुद्ध करने में अहम् भूमिका निभाता है। इन औषधियों के साथ घी आदि के धूम वायुमण्डल को संक्रमण मुक्त करते हैं। इससे पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश की शुद्धि होती है, जिससे मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है। यज्ञ के दौरान आग में जो घी डाला जाता है, वह समाप्त नहीं होता, अपितु परमाणुओं के रूप में आस–पास के वातावरण में फैला जाता है। हवन में जो कुछ भी डाला जाता है, वह परमाणुओं में टूटकर सम्पूर्ण वायुमण्डल को शुद्ध कर देता है। शक्कर के धुंए में भी वायु को शुद्ध करने की क्षमता होती है। यज्ञ से वर्षा प्रदान करने वाले बादलों की भी उत्पत्ति होती है। वेदों में भी यज्ञ हवन क्रिया से व्याधि एवं प्रदूषण निवारण की स्पष्ट व्याख्या की गयी है। प्रकृति देवता की पूजा का एकमात्र माध्यम अग्निहोत्र को ही माना गया है। इस प्रकार स्पष्ट है कि यज्ञ द्वारा शुद्ध एवं स्वच्छ वातावरण का निर्माण होता है। यज्ञ से वातावरण संशोधित होता है एवं परिशोधन होता है।

आज प्राकृतिक तत्वों के दोहन एवं शोषण का आलम यह है कि जल, जंगल, जीव, जमीन एवं जीवन के लिए घोर संकट उत्पन्न हो गया है। भावी पीढ़ी के लिए भी ये प्राकृतिक संसाधन बचेंगे या नहीं, यह सोचनीय एवं चिंतनीय बात हो गई है। इन सबके चलते निकट भविष्य में मानव सभ्यता का अंत अभी से परिलक्षित होने लगा है। प्रकृति में असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होती जा रही है, जिसके चलते हमारी धरती जीवन–चक्र भी समाप्त होता नजर आ रहा है। प्रकृति में बढ़ते असंतुलन के कारण बाढ़, सूखा, भूस्खलन, मृदा अपर्दन, मरूस्थलीकरण, भूकम्प, जलवायु, सुनामी, ग्लोबल वार्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन जैसी प्रलयंकारी प्राकृतिक आपदायें उत्पन्न होकर हमारा अस्तित्व मिटाने के लिए तत्पर हैं।

प्रश्न यह उठता है कि आखिर प्रकृति को विनष्ट होने से कैसे बचाया जाय? यह भी बात सत्य है कि हम विकास को रोक नहीं सकते। ऐसी स्थिति में हमें समविकास, पारिस्थितिकीय विकास, सम्पोषित विकास, समन्वित विकास एवं सतत् विकास की अवधारणा को दृष्टिगत रखते हुए विकास करना होगा, जिससे कि हमारा विकास भी हो और हमारे प्रकृति का विनाश भी न हो और इन प्राकृतिक तत्वों को विनाश से बचाने हेतु हमें भारतीय संस्कृति की अवधारणा के सहारे ही चलना होगा।

हम भगवान की पूजा करते हैं, भगवान में भ=भूमि, ग=गगन, व=वायु, अ=अग्नि, एवं न=नीर की अवधारणा छिपी हुई है। अर्थात् हमारे प्रकृति के मूल पांच तत्वों क्षितिज, जल, पावक, गगन एवं समीर की ही पूजा भगवान के रूप में करते हैं और इस तरह भगवान की पूजा के रूप में प्रकृति के मूलभूत पांच तत्वों की रक्षा के लिए एवं संरक्षण के लिए पूजा करते हैं। पर्यावरण संरक्षण के प्रति इतनी उत्कृष्ट संकल्पना हमें कहीं नहीं दिखायी पड़ती है।

आज प्रकृति संरक्षण के लिए सबसे आवश्यक है कि हम प्राकृतिक तत्वों के अतिशय दोहन एवं शोषण तथा अतिशय उपभोग पर विशेष ध्यान दें। प्राकृतिक तत्वों एवं प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, बचत प्रक्रिया, दीर्घकालीन उपयोग, बरबादी पर रोक, विकल्प की खोज, गुणवत्ता में वृद्धि, समुचित उपयोग, एकाधिकार पर रोक, अनियंत्रित दोहन एवं शोषण पर रोक, आवश्यकता में कमी तथा जनजागरूकता आदि उपायों एवं सिद्धान्तों को अपनाकर किया जा सकता है।

आवश्यकता इस बात है कि आज हम प्रकृति संरक्षण से जुड़ी इन सभी संकल्पनाओं को आम जनता से अवगत करायें ताकि हमारे जन–मन एवं नैतिक कार्यों से जुड़े प्रकृति संरक्षण के इन संकल्पनाओं को अपने जीवन में अपनाकर हम प्रकृति को सुरक्षा एवं संरक्षा प्रदान कर चिरकाल तक संरक्षित कर इस धरा के अस्तित्व को बचा सके अन्यथा इस धरा के साथ–साथ हमारा भी अस्तित्व समाप्त हो जायेगा।

और अन्त में–

जब प्रकृति का करेंगे अधिक शोषण,
तो नहीं मिलेगा किसी को पोषण।

x x x

जब प्रकृति का करेंगे अधिक क्षरण,
तो नहीं मिलेगा किसी को शरण।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय चिन्तन परम्परा में जल एवं पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा कूट–कूट कर भरी पड़ी है। किन्तु अफसोस तो इस बात का है कि आज हम अपनी इस विरासत को भूलते जा रहे हैं, जो कि हमारे जीवन में रचा–बसा था एवं हमारे जीवन का क्रम था। यदि आज पुनः हम भारतीय चिन्तन परम्परा का अनुशीलन करते हुए अपना जीवन निर्वाह करें तो निश्चित है कि पर्यावरण संरक्षण को बल मिलेगा एवं पारिस्थितिकी संतुलन बना रहेगा।

References:

1- Rigved.
2- Charak Sanhita.
3- Prashnopnishad.
4- Manusmriti.
5- Atharvaved.
6- Yajurved.
7- Shwetashwaropanishad.
8- Mahabharat (Bhishm Parva)
9- Nrisingh Puran.
10- Bhamini Vilas.
11- Skand Puran.
12- Varah Puran.
13- Vishnu Dharm Sutra.
14- Chanakya Niti.
15- Yagyavalkya Smriti.